ISSN : 2277-7865
Price : ₹ 50

तित्थयर

वर्ष : ३८ अंक : ०२ मई २०१४

॥ जैन भवन ॥

श्रीश्री नेमिनाथाय नमः

"ऐसा विश्वास दिल में जमाते चलो
सिद्ध, अरिहन्त को मन में रमाते चलो,
वक्त आयेगा ऐसा कभी न कभी
सिद्धि पायेंगे हम भी कभी न कभी"।

KUSUM CHANACHUR

Founder : Late Sikhar Chand Churoria

MANUFACTURED BY

K. K. FOOD PRODUCTS

A quality product of
Nakeen, Chanachur, Bhujia, Gathia etc.

Partners
Mr. Anil Kumar
Mr. Sunil Kumar Churoria

P.O.- Azimganj, Dist. Murshidabad
Pin- 742122, West Bengal
Mobile: 09734067986/9434060429
Phone No: 03483-253232, Fax No.: 03483-253566
E-mail ID : kusumchanachur@hotmail.com
azimganjsunil@gmail.com

ISSN 2277 - 7865

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३८ अंक - ०२ मई २०१४

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिय
पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : (033) 2268-2655, 2272-9028,
Email : jainbhawan@rediffmail.com
Website : www.jainbhawan.org

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें --
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Life Membership : India : Rs. 5000.00. Yearly : 500.00
Foreign : $ 500

Published by Dr. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 006 Phone : 2241-1006

संपादन

डॉ. लता बोथरा
पी-एच.डी., डी.लिट्

॥ जैन भवन ॥

Editorial Board :

1. Dr. Satyaranjan Banerjee
2. Dr. Sagarmal Jain
3. Dr. Lata Bothra
4. Dr. Jitendra B. Shah
5. Prof. Anupam Jash
6. Dr. Abhijit Bhattacharyya
7. Dr. Peter Flugel
8. Dr. Rajiv Dugar
9. Smt. Jasmine Dudhoria
10 Smt. Pushpa Boyd

अनुक्रमणिका

क्र. सं. लेख	लेखक	पृ. सं.
१. यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान	डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी	१०५
२. सोने के कंगन	श्री केवल मुनि	१२३

ISSN 2277 - 7865

कवरपृष्ठ : जैन मुनियों की मूर्तियाँ हाथ में ओघा लिए हुए
बौद्धों में ओघा का प्रचलन नहीं है।
(Fei lai feng caves China)

Composed by:

Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान

डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी

(2) अजिता (या रोहिणी) यक्षी

शास्त्रीय परम्परा :

जिन अजितनाथ की यक्षी को श्वेतांबर परम्परा में अजिता (या अजितबला या विजया)[1] और दिगंबर परम्परा में रोहिणी नाम दिया गया है। दोनों परम्पराओं में चतुर्भुजा यक्षी को लोहासन पर विराजमान बताया गया है।

श्वेतांबर परम्परा—निर्वाणकलिका में लोहासन पर विराजमान चतुर्भुजा अजिता के दाहिने हाथों में बरदमुद्रा एवं पाश और बायें हाथों में अंकुश एवं फल के प्रदर्शन का विधान है।[2] अन्य ग्रन्थों में भी उपर्युक्त लक्षणों के ही उल्लेख हैं।[3] **आचारदिनकर एवं देवतामूर्तिप्रकरण** में यक्षी के वाहन के रूप में लोहासन के स्थान पर क्रमशः गाय और गोधा का उल्लेख है।[4]

दिगंबर परम्परा—प्रतिष्ठासारसंग्रह में लोहासन पर विराजमान चतुर्भुजा रोहिणी के हाथों में वरदमुद्रा, अभयमुद्रा, शंख एवं चक्र के अंकन का निर्देश है।[5] अन्य ग्रन्थों में भी यही विवरण प्राप्त होता है।[6]

---

1. मन्त्राधिराजकल्प
2. ....समुत्पन्नामजिताभिधानां यक्षिणी गौरवर्णा लोहासनाधिरूढां चतुर्भुजां वरदपाशाधिष्ठितदक्षिणकरां बीजपुरकांकुशयुक्तवामकरां चेति।। निर्वाणकलिका 18.2
3. त्रि.श.पु.च. 2.3.845-46; पद्मानन्दमहाकाव्य : परिशिष्ट-अजितस्वामीचरित 21-22; मन्त्राधिराजकल्प 3.52
4. आचारदिनकर 34, पृ. 176; देवतामूर्तिप्रकरण 7.21
5. देवी लोहासना रोहिण्याख्या चतुर्भुजा।
   वरदामयहस्तासौ शंखचक्रोज्वलायुधा।।प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.18
6. प्रतिष्ठासारोद्धार 3.157; प्रतिष्ठातिलकम 7.2, पृ. 341, अपराजितपृच्छा 221.16

इस प्रकार दोनों परम्पराओं में केवल यक्षी के नामों एवं आयुधों के सन्दर्भ में ही भिन्नता प्राप्त होती है। श्वेताम्बर परम्परा में अजिता के मुख्य आयुध पाश एवं अंकुश, और दिगंबर परम्परा में रोहिणी के मुख्य आयुध चक्र एवं शंख हैं। यक्षी का अजिता नाम सम्भवतः उसके जिन (अजितनाथ) से तथा रोहिणी नाम प्रथम महाविद्या रोहिणी से ग्रहण किया गया है।[1]

दक्षिण भारतीय परम्परा— दिगम्बर परम्परा के अनुसार चतुर्भुजा यक्षी के ऊपरी हाथों में चक्र और नीचे के हाथों में अभयमुद्रा और कटकमुद्रा होने चाहिए। अज्ञातनाम श्वेताम्बर ग्रन्थ में मकरवाहना चतुर्भुजा यक्षी के करों में वज्र अंकुश, कटार (शंकु) एवं पद्म के प्रदर्शन का निर्देश है। यक्ष-यक्षी-लक्षण में धातु निर्मित आसन पर विराजमान यक्षी के हाथों में वरदमुद्रा, शंख एवं चक्र का उल्लेख हैं।[2] इस प्रकार उत्तर और दक्षिणी भारत में ग्रन्थों में चक्र, शंख, अंकुश एवं अभय-(या वरद) मुद्रा के प्रदर्शन में समानता प्राप्त होती है। **यक्ष-यक्षी-लक्षण** का विवरण पूरी तरह **प्रतिष्ठासारसंग्रह** के समान है।

मूर्ति-परम्परा :

गुजरात-राजस्थान— इस क्षेत्र की अजितनाथ मूर्तियों में यक्ष-यक्षी का चित्रण नहीं प्राप्त होता है। पर आबू, कुम्भारिया, तारंगा, सादरी, घाणेराव जैसे श्वेतांबर स्थलों पर दो ऊर्ध्व करों में अंकुश एवं पाश धारण करने वाली चतुर्भुजा देवी का निरूपण विशेष लोकप्रिय था। देवी के निचले करों में वरद (या अभय) मुद्रा एवं मातुलिंग (या जलपात्र) प्रदर्शित हैं। देवी का वाहन कभी गज और कभी सिंह है। देवी को सम्भावित पहचान अजिता से की जा सकती है।[3]

1. महाविद्या रोहिणी की एक भुजा में शंख भी प्रदर्शित है।
2. रामचन्द्रन, टी. एन., पू. नि. पृ. 198
3. श्वेताम्बर स्थलों पर महाविद्यालओं की विशेष लोकप्रियता, यक्षियों की स्वतन्त्र मूर्तियों की अल्पता एवं अजितनाथ की मूर्तियों में यक्ष-यक्षी का न उत्कीर्ण किया जाना, इस पहचान में बाधक हैं।

उत्तरप्रदेश-मध्यप्रदेश—(क) स्वतन्त्र मूर्तियां—मालादेवी मन्दिर (ग्यारसपुर, विदिशा) एवं देवगढ़ से रोहिणी की दसवीं-ग्यारहवीं शती ई. की तीन मूर्तियां मिली है। मालादेवी मन्दिर की मूर्ति (10वीं शती ई.) उत्तरी मण्डप के अधिष्ठान पर उत्कीर्ण है। इसमें द्वादशभुजा रोहिणी ललितमुद्रा में लोहासन पर विराजमान है। लोहासन के नीचे एक अल्पष्ट भी पशु आकृति (सम्भवतः गज-मस्तक) उत्कीर्ण है। यक्षी के छह अवशिष्ट हाथों में पद्म, वज्र, चक्र, शंख, पुष्प और पद्म प्रदर्शित हैं। देवगढ़ में रोहिणी की दो मूर्तियां हैं। एक मूर्ति (1059 ई.) मन्दिर 11 के सामने के स्तम्भ पर है। इसमें अष्टभुजा रोहिणी ललितमुद्रा में भद्रासन पर विराजमान है। आसन के नीचे गोवाहन उत्कीर्ण है। रोहिणी वरदमुद्रा, अंकुश, वाण, चक्र, पाश, धनुष, शूल एवं फल से युक्त है। दूसरी मूर्ति (11वीं शती ई.) मन्दिर 12 के अर्धमण्डप के समीप के स्तम्भ पर है। इसमें गोवाहना रोहिणी चतुर्भुजा है और उसकी भुजाओं में वरदमुद्रा, बाण, धनुष एवं जलपान हैं।[1]

(ख) जिन-संयुक्त मूर्तियां— जिन संयुक्त मूर्तियों में यक्षी का अपने विशिष्ट स्वतन्त्र स्वरूप में निरूपण नहीं प्राप्त होता। देवगढ़ एवं खजुराहों की अजितनाथ की मूर्तियों में सामान्य लक्षणों वाली द्विभुजा यक्षी अभयमुद्रा (या खड्ग) एवं फल (या जलपात्र) से युक्त है।

बिहार-उड़ीसा-बंगाल— इस क्षेत्र में केवल उड़ीसा की नवमुनि एवं बारभुजी गुफाओं से ही रोहिणी की मूर्तियां (11वीं-12वीं शती ई.) मिली है। नवमुनि गुफा की मूर्ति में अजित की यक्षी चतुर्भुजा है और उसका वाहन गज है। यक्षी के हाथों में अभयमुद्रा, वज्र, अंकुश और तीन कांटे वाली कोई वस्तु प्रदर्शित है। किरीटमुकुट से शोभित यक्षी के ललाट पर तीसरा नेग उत्कीर्ष है। यक्षी के निस्पण में गजवाहन एवं व्रज और अंकुश का प्रदर्शन हिन्दू इन्द्राणी (मातृका) का प्रभाव है।[2] बारभुजी

---

1. देवगढ़ की मूर्तियों पर श्वेतांबर परम्परा की महाविद्या रोहिणी का प्रभाव है। गोवाहना रोहिणी महाविद्या की भुजाओं में बाण, अक्षमाला, धनुष एवं शंख प्रदर्शित हैं।
2. मित्रा, देवला, पू. नि., पृ. 128

गुफा में अजित के साथ द्वादशभुजा रोहिणी आमूर्तित है। वृषभवाहना रोहिणी को अवशिष्ट वाहिनी भुजाओं में वरदमुद्रा, शूल, बाण एवं खड्ग और बायी में पाश (1) धनुष, हल, खेटक, सनाल पद्म एवं घण्टा (?) प्रदर्शित हैं। यक्षी की एक बायी भुजा वक्षस्थल के समक्ष स्थित है।[1] यक्षी के साथ वृषभवाहन एवं धनुष और बाण का प्रदर्शन रोहिणी महाविद्या का प्रभाव है। बारभुजी गुफा की एक दूसरी मूर्ति में रोहिणी अष्टभुजा है। वृषभवाहना यक्षी के शीर्ष भाग में गज-लांछन-युक्त अजितनाथ की मूर्ति उत्कीर्ण है। रोहिणी के दक्षिण करों में वरदमुद्रा, पताका, अंकुश और चक्र एवं वाम करों में शंख ?, जलपात्र, वृक्ष की टहनी और चक्र हैं।[2] नवमुनि एवं बारभुजी गुफाओं की मूर्तियों के विवरणों से स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में रोहिणी की लाक्षणिक विशेषताएँ स्थिर नहीं हो पायी थी।

विश्लेषण :

सम्पूर्ण अध्ययन से स्पष्ट है कि लगभग दसवीं शती ई. में यक्षी की स्वतन्त्र मूर्तियों का उत्कीर्णन प्रारम्भ हुआ, जिनके उदाहरण ग्यारसपुर (मालादेवी मन्दिर), देवगढ़ एवं उड़ीसा में नवमुनि और बारभुजी गुफाओं से मिले हैं। दिगंबर स्थलों की इन मूर्तियों में रोहिणी के निरूपण में अधिकांशतः श्वेताम्बर महाविद्या रोहिणी की विशेषताएँ ग्रहण की गयी। केवल मालादेवी मन्दिर की मूर्ति में ही वाहन और आयुधों के सन्दर्भ में दिगंबर परम्परा का निर्वाह किया गया है।

(3) त्रिमुख यक्ष

शास्त्रीय परम्परा

त्रिमुख जिस सम्भवनाथ का यक्ष है। दोनों परम्पराओं में उसे तीन मुखों, तीन नेत्रों और छह भुजाओं वाला तथा मयूरवाहन से युक्त बताया गया है।

---

1. वही, पृ. 130
2. वही, पृ. 133

श्वेतांबर परम्परा—निर्वाणकलिका में त्रिमुख यक्ष के दाहिने हाथों में नकुल, गदा एवं अभयमुद्रा और बायें में फल, सर्प एवं अक्षमाला का उल्लेख है।[1] अन्य ग्रन्थों में भी इन्हीं आयुधों की चर्चा है।[2] **मन्त्राधिराजकल्प** में त्रिमुख यक्ष का वाहन मयूर के स्थान पर सर्प है।[3] **आचारदिनकर** के अनुसार यक्ष नौ नेत्रों वाला (नवाक्ष) है।[4]

दिगम्बर परम्परा— प्रतिष्ठासारसंग्रह में आयुधों का अनुल्लेख है।[5] **प्रतिष्ठासारोद्धार** में त्रिमुख यक्ष के दाहिने हाथों में दण्ड, त्रिशूल एवं कटार (शितकर्तृका), और बायें में चक्र, खड्ग एवं अंकुश दिये गये हैं।[6] **अपराजितपृच्छा यक्ष के करों में परशु, अक्षमाला, गदा, चक्र, शंख और वरदमुद्रा का उल्लेख करता है।**[7]

दक्षिण भारतीय परम्परा— दिगम्बर परम्परा के अनुसार मयूर पर आरूढ़ त्रिमुख यक्ष षड्भुज है और उसकी दाहिनी भुजाओं में त्रिशूल, पाश (या वज्र) एवं अभयमुद्रा, और बायी में खड्ग, अंकुश एवं पुस्तक (या खुली हुई हथेली) रहते हैं। अज्ञातनाम श्वेतांबर ग्रन्थ के अनुसार वीरमर्कट पर आरूढ़ यक्ष के करों में खड्ग, खेटक, कटार

---

1. ......त्रिमुखयक्षेश्वरं त्रिमुखं त्रिनेत्रं श्यामवर्णं मयूरवाहनं षड्भुजं नकुलगदाभययुक्तदक्षिणपाणिं मातुलिंगनागाक्षसूत्रान्वितवामहस्तं चेति। **निर्वाणकलिका** 18.3
2. त्रि. श. पु. च 3.1.385-86; पद्मानन्दमहाकाव्य : परिशिष्ट-सम्भवनाथचरित्र 17-18.
3. सर्पासनस्थितिरयं त्रिमुखो मदीयम्। **मन्त्राधिराजकल्प** 3.28
4. आचारदिनकर 34, पृ. 173
5. षड्भुजस्तिमुखोयक्षस्त्रिनेत्र सिखिवाहनः।
   श्यामलांगो विनीतात्मा सम्भवं जिनमाश्रितः।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.19
6. चक्रासिशृण्युपगसव्यसयोन्यहस्तैर्दडत्रिशूलमुपयन् शितकर्तृकाच।
   वाजिध्वजप्रभुनतः शिखिगोंजनाभस्त्रयक्षः प्रतिक्षतु बलिं त्रिमुखाख्ययक्षः।।
   प्रतिष्ठासारोद्धार 221.45 द्रष्टव्य, प्रतिष्ठातिलकम् 7.3, पृष्ठ 332
7. मयूरस्थस्त्रिनेत्रश्च त्रिवक्त्रः श्यामवर्णकः।
   परश्वक्षगदाचक्र शंखा वरश्च षड्भुजः।। अपराजितपृच्छा 221.45

(कट्टि), चक्र, त्रिशूल एवं दण्ड होने चाहिए। **यक्ष-यक्षी-लक्षण** में तीन मुखों एवं नेत्रों वाले यक्ष का वाहन मयूर है और उसके हाथों में चक्र, खड्ग, दण्ड, त्रिशूल, अंकुश एवं सत्कीर्तिक (शस्त्र) के प्रदर्शन का निर्देश है।[1] इस प्रकार स्पष्ट है कि दक्षिण भारत के श्वेतांबर एवं दिगंबर ग्रन्थों में एकरूपता है। साथ ही उन पर उत्तर भारत के दिगंबर ग्रन्थों का प्रभाव भी दृष्टिगत होता है।

मूर्ति-परम्परा :

त्रिमुख यक्ष की एक भी स्वतन्त्र मूर्ति नहीं मिली है। सम्भवनाथ की मूर्तियों में भी पारम्परिक यक्ष का उत्कीर्णन नहीं हुआ है। यक्ष का कोई स्वतन्त्र स्वरूप भी नियत नहीं हो सका था। सामान्य लक्षणों वाला यक्ष समान्यतः द्विभुज है।[2] देवगढ़ की छह मूर्तियों (10वीं-12वीं शती ई.) में द्विभुज यक्ष अभयमुद्रा[3] एवं फल (या कलश) के साथ तथा मन्दिर 15 और 30 की दो चतुर्भुज मूर्तियों (11वीं-12वीं शती ई.) में बरद (या अभय) मुद्रा, गदा, पुस्तक (या पद्म) और फल (या कलश) के साथ निरूपित है। खजुराहो की दो मूर्तियों[4] (11वीं-12वीं शती ई.) में द्विभुज यक्ष के हाथों में पात्र और धन का थैला (या मातुलिंग) हैं।

(3) दुरितारी (या प्रज्ञप्ति) यक्षी

शास्त्रीय परम्परा :

दुरितारी (या प्रज्ञप्ति) जिन सम्भवनाथ की यक्षी है। श्वेतांबर परम्परा में इसे दिरितारी और दिगंबर परम्परा में प्रज्ञप्ति नामों से सम्बोधित किया गया है। श्वेतांबर परम्परा में यक्षी चतुर्भुजा और दिगंबर परम्परा में षड्भुजा है।

1. रामचन्द्रन, टी. एन., पू.नि., पृ. 198
2. केवल देवगढ़ की दो मूर्तियों में यक्ष चतुर्भुज और स्वतन्त्र लक्षणों वाला है।
3. मन्दिर 17 और 19 की दो मूर्तियों (11वीं शती ई.) में यक्ष की दाहिनी भुजा में अभयमुद्रा के स्थान पर गदा प्रदर्शित है।
4. पुरातात्त्विक संग्रहालय, खजुराहो (1715) एवं मन्दिर 16

श्वेतांबर परम्परा-निर्वाणकलिका में मेषवाहना दुरितारी के दाहिने हाथों में वरदमुद्रा और अक्षमाला तथा बायें में फल और अभयमुद्रा हैं।[1] **त्रिषष्टिशलापुरुषचरित्र**[2] **तथा पद्मानन्दमहाकाव्य**[3] में फल के स्थान पर सर्प का उल्लेख है। परवर्ती ग्रन्थों में यक्षी के वाहन के सन्दर्भ में पर्याप्त भिन्नता प्राप्त होती है। **पद्मानन्दमहाकाव्य में वाहन** के रूप में छाग (अज), **मन्त्राधिराजकल्प** में मयूर[4] और **देवतामूर्तिप्रकरण** में महिष[5] का उल्लेख है।

दिगंबर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में षड्भुजा यक्षी का वाहन पक्षी है। ग्रन्थ में प्रज्ञप्ति की केवल चार ही भुजाओं के आयुधों–अर्द्धेन्दु, परशु, फल एवं वरदमुद्रा-का उल्लेख है।[6] **प्रतिष्ठासारोद्धार** में पक्षीवाहना प्रज्ञप्ति के करों में अर्द्धेन्दु, परशु, फल, खड्ग, इढ़ी एवं वरदमुद्रा के प्रदर्शन का निर्देश है।[7] **प्रतिष्ठातिलकम्** में इढ़ी के स्थान पर पिंडी का उल्लेख है।[8] **अपराजितपृच्छा** में षड्भुजा यक्षी के दो हाथों में खड्ग और इढ़ी के स्थान पर क्रमशः अभयमुद्रा एवं पद्म दिये गये हैं।[9]

---

1. ....दुरितारिदेवी गौकवर्णां मेषवाहनां चतुर्भुजां वरदाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणकरां फलाभयान्वितवामकरां चेति।। निर्वाणकलिका 18.3
अचारदिनकर में अक्षमाला के स्थान पर मुक्तामाला का उल्लेख है (34, पृ.176)।
2. दक्षिणाभ्यांभुजाभ्यां तु वरदेनाऽक्षसूत्रिणा।
वामाभ्यां शोभमाना तु फणिनाऽभयदेन च ।। त्रि. श. पु. च. 3.1.388
3. पद्मानन्दमहाकाव्यः परिशिष्ट—सम्भवनाथचरित्र 19-20
4. देवी तुषारगिरिसोदरदेहकान्तिर्दद्यात् सुखं शिखिगतिः सततं परीताः मंत्राधिराजकल्प 3.53
5. दुरितारिगौरवर्णा यक्षिणी महिषासना। देवतामूर्तिप्रकरण 7.23
6. प्रज्ञप्तिर्देवता श्वेता षड्भुजापक्षिवाहना।
अर्द्धेन्दुपरशुं धत्ते फलाश्रीष्टावरप्रदा।।प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.2023
7. पक्षिस्थार्षेन्दुपरशुफलासीढीवरैः सिता।
चतुश्चापशतोच्चाहंभ्दक्ता प्रज्ञप्तिरिच्यते।। प्रतिष्ठासारोद्धार 3.158
8. ....कृपाणपिण्डीवरमादधानाम्। प्रतिष्ठातिलकम् 7.3, पृ. 341
9. अभयवरदफलचन्द्रां परशुरुत्पलम्।। अपराजितपृच्छा 221.17

दक्षिण भारतीय परम्परा– दिगंबर परम्परा में हंसवाहना यक्षी षड्भुजा है और उसकी दक्षिणी भुजाओं में परशु खड्ग एवं अभयमुद्रा और वाम में पाश, चक्र एवं कटकमुद्रा का उल्लेख है। अज्ञातनाम श्वेतांबर ग्रन्थ में अश्ववाहना यक्षी द्विभुजा है जिसकी भुजाओं में वरदमुद्रा एवं पद्म दिये गये हैं। **यक्ष-यक्षी-लक्षण** में पक्षीवाहना यक्षी षड्भुजा है तथा प्रतिष्ठासारसंग्रह के समान, उसकी केवल चार भुजाओं के आयुध–अर्धचन्द्र, परशु, फल एवं वरदमुद्रा-वर्णित हैं।[1]

मूर्ति परम्परा :

(क) स्वतन्त्र मूर्तियां– यक्षी की केवल दो मूर्तियां (11वीं-12वीं शती ई.) मिली हैं। ये मूर्तियां उड़ीसा के नवमुनि एवं बारभुजी गुफाओं में हैं। इनमें पारम्परिक विशेषताएँ नहीं प्रदर्शित हैं। नवमुनि गुफा की मूर्ति में पद्मासन पर ललितमुद्रा में विराजमान द्विभुजा यक्षी जटामुकुट और हाथों में अभयमुद्रा एवं सनाल पद्म से युक्त है।[2] बारभुजी गुफा की मूर्ति में यक्षी चतुर्भुजा है। उसका वाहन (कोई पशु) आसन के नीचे उत्कीर्ण है। यक्षी के दो अवशिष्ट हाथों में वरदमुद्रा और अक्षमाला हैं।[3]

(ख) जिन संयुक्त मूर्तियां– देवगढ़ एवं खजुराहो की सम्भवनाथ (11वीं-12वीं शती ई.) में यक्षी आमूर्तित है। इनमें यक्षी द्विभुजा और सामान्य लक्षणों वाली है। द्विभुजा यक्षी के करों में अभयमुद्रा एवं फल (या पद्म, या खड्ग या कलश) प्रदर्शित हैं। देवगढ़ की एक मूर्ति में यक्षी चतुर्भुजा भी है जिसके तीन सुरक्षित हाथों में वरदमुद्रा, पद्म एवं कलश हैं। सम्पूर्ण अध्ययन से स्पष्ट है कि मूर्त अंकनों में यक्षी का कोई पारम्परिक या स्वतन्त्र नियम नहीं हो सका था।

(4) ईश्वर (या यक्षेश्वर) पक्ष

शास्त्रीय परम्परा : ईश्वर (या यक्षेश्वर) जिन अभिनन्दन का यक्ष

1. रामचन्द्रन, टी. एन., पू. नि. पृ. 199
2. मित्रा, देवला, पू. नि., पृ. 128
3. वही, पृ. 130

है। श्वेतांबर परम्परा में यक्ष को ईश्वर और यक्षेश्वर नामों से, पर दिगंबर परम्परा में केवल यक्षेश्वर नाम से ही सम्बोधित किया गया है। दोनों परम्पराओं में यक्ष चतुर्भुज है और उसका वाहन गज है।

श्वेताम्बर परम्परा-निर्वाणकलिका में गजारूढ़ ईश्वर के दाहिने हाथों में फल और अक्षमाला तथा बायें में नकुल और अंकुश के प्रदर्शन का निर्देश है।[1] अन्य ग्रन्थों में भी इन्हीं आयुधों के उल्लेख हैं।[2]

दिगंबर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में गजारुढ़ यक्षेश्वर के करों के आयुधों का अनुल्लेख है।[3] **प्रतिष्ठासारोद्धार** में यक्षेश्वर की दाहिनी भुजाओं के आयुध संक-पत्र और खड्ग तथा बायी के कार्मुक और खेटक हैं।[4] **प्रतिष्ठातिलकम्** में संकपत्र के स्थान पर बाण का उल्लेख है।[5] **अपराजितपृच्छा** में यक्ष का चतुरानन नाम से स्मरण है जिसका वाहन हंस तथा भुजाओं के आयुध सर्प, पाश, वज्र और अंकुश हैं।[6]

यक्षेश्वर के निरूपण में गजवाहन एवं अंकुश का प्रदर्शन सम्भवतः हिन्दू देव इन्द्र का प्रभाव है। **अपराजितपृच्छा** में अंकुश के साथ ही वज्र के प्रदर्शन का भी निर्देश है। **अपराजितपृच्छा** में यक्ष के नाम, चतुरानन, और वाहन, हंस, के सन्दर्भ में हिन्दू ब्रह्मा का प्रभाव भी देखा जा सकता है।

---

1. तत्तीर्थोत्पन्नमीश्वरयक्षं श्यामवर्ण गजवाहनं चतुर्भुजं मातुलिंगाक्षसूत्रयुतदक्षिणपाणिं नकुलांकुशान्वितवामपाणिं चेति। निर्वाणकलिका 18.4
2. त्रि.श.पु.च. 3.2.159-60; मन्त्राधिराजकल्प 3.29; आचारदिनकर 34, पृ.174
3. अभिनन्दननाथस्य यक्षो यक्षेश्वराभिधः।
   हस्तिवाहनमारूढः श्यामवर्णश्चतुर्भुजः।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.21
4. प्रेरंवद्धनुः खेटकवामपाणि संकपत्रास्यपसव्यहस्तम्।
   श्यामं करिस्थं कपिकेतुभक्तं यक्षेश्वरं यक्षमिहार्चयामि।। प्रतिष्ठासारोद्धार 3.132
5. ......वामान्यहस्तोद्धृतबाणखड्गं। **प्रतिष्ठातिलकम्** 7.4, पृ. 332
6. नागपाशवज्रांकुशा हंसस्थश्चतुराननः। अपराजितपृच्छा 221.46

दक्षिण भारतीय परम्परा– दक्षिण भारत में दोनों परम्परा के ग्रन्थों में उत्तर भारत की दिगंबर परम्परा के अनुरूप गजारूढ़ यक्ष चतुर्भुज है और उसकी भुजाओं के आयुध अभयमुद्रा (या बाण), खड्ग, खेटक एवं धनुष हैं।[1]

मूर्ति-परम्परा : यक्ष की एक भी स्वतन्त्र मूर्ति नहीं मिली है। केवल अभिनन्दन की तीन मूर्तियों (10वीं-11वीं शती ई.) में यक्ष निरूपित है। इनमें से दो खजुराहो (पार्श्वनाथ मन्दिर, मन्दिर 29) तथा तीसरी देवगढ़ (मन्दिर 9) से मिली हैं। इनमें सामान्य लक्षणों वाला द्विभुज यक्ष अभयमुद्रा एवं फल (या कलश) से युक्त है।

(4) कालिका (या वज्रश्रृंखला) यक्षी

शास्त्रीय परम्परा : कालिका (या वज्रश्रृंखला) जिन अभिनन्दन की यक्षी है। श्वेतांबर परम्परा में यक्षी को कालिका (या काली) और दिगंबर परम्परा के वज्र श्रृंखला कहा गया है। दोनों परम्पराओं में यक्षी को चतुर्भुजा बताया गया है।

श्वेतांबर परम्परा–निर्वाणकलिका में पद्मवाहना कालिका के दाहिने हाथों में वरदमुद्रा और पाश एवं बायें में सर्प और अंकुश का उल्लेख है।[2] अन्य ग्रन्थों में भी यही लाक्षणिक विशेषताएं वर्णित हैं।[3]

दिगंबर परम्परा–प्रतिष्ठासारसंग्रह में वज्रश्रृंखला के वाहन हंस और भुजाओं में वरदमुद्रा, नागपाश, अक्षमाला और फल का उल्लेख है।[4] परवर्ती ग्रन्थों में भी इन्हीं आयुधों का वर्णन है।[5]

---

1. रामचन्द्रन, टी. एन., पू. नि., पृ. 199
2. ....कालिकादेवी श्यामवर्णां पद्मासनां चतुर्भुजां वरदापाशाधिष्ठितदक्षिणभुजां नागांकुशान्वितवामकरां चेति। निर्वाणकलिका 18.4
3. त्रि.श.पु.च. 3.2.161-62 ; आचारदिनकर 34 , पृ. 176 ; मंत्राधिराजकल्प 3.54
4. वरदा हंसमारूढ़ा देवता वज्रश्रृंखला।
   नागपाशाक्षसूत्रोरुफलहस्ता चतुर्भुजा।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.22-23
5. प्रतिष्ठासारोद्धार 3.159 ; प्रतिष्ठातिलकम् 7.4 , पृ. 341 ; अपराजितपृच्छा 221.18

दक्षिण भारतीय परम्परा : दिगंबर परम्परा में चतुर्भुजा यक्षी का वाहन हंस है और वह भुजाओं में अक्षमाला, अभयमुद्रा, सर्प एवं कटकमुद्रा धारण किये है। अज्ञातनाम श्वेतांबर ग्रन्थ में यक्षी का वाहन कपि और करों में चक्र, कमण्डलु, वरदमुद्रा एवं पद्म हैं। **यक्ष-यक्षी-लक्षण** में हंसवाहना यक्षी के करों में वरदमुद्रा, फल, पाश एवं अक्षमाला का वर्णन है।[1] वाहन हंस एवं भुजाओं में पाश, अक्षमाला एवं फल के प्रदर्शन में दक्षिण भारतीय परम्पराएं उत्तर भारतीय दिगंबर परम्परा के समान हैं।

मूर्ति-परम्परा :

(क) स्वतन्त्र मूर्तियां– वज्रश्रृंखला की तीन मूर्तियां मिली हैं। ये मूर्तियां उत्तर प्रदेश में देवगढ़ से (मन्दिर 12) एवं उड़ीसा में उदयगिरि-खण्डगिरि की नवमुनि और बारभुजी गुफाओं से मिली है। इनमें यक्षी के साथ पारम्परिक विशेषताएं नहीं प्रदर्शित हैं। देवगढ़ की मूर्ति (862 ई.) में जिन अभिनन्दन के साथ आमूर्तित द्विभुजा यक्षी को लेख में **भगवती सरस्वती** कहा गया है। यक्षी की दाहिनी भुजा में चामर है और बायीं जानु पर स्थित है। नवमुनि गुफा की मूर्ति में यक्षी चतुर्भुजा है तथा उसकी भुजाओं में अभयमुद्रा, चक्र, शंख और बालक हैं।[2] किरीटमुकुट से शोभित यक्षी का वाहन कपि है। स्पष्ट है कि यक्षी के निरूपण में कलाकार ने संयुक्त रूप से हिन्दू वैष्णवी (चक्र, शंख एवं किरीटमुकुट) एवं जैन यक्षी अम्बिका (बालक)[3] की विशेषताएं प्रदर्शित की हैं। यक्षी का कपिवाहन अभिनन्दन के लांछन (कपि) से ग्रहण किया गया है। बारभुजी गुफा की मूर्ति में यक्षी अष्टभुजा और पद्म पर आसीन है। यक्षी के दो हाथों में उपवीणा (हार्प) और दो में वरदमुद्रा एवं वज्र है। शेष हाथ खण्डित हैं।[4]

---

1. रामचन्द्रन, टी.एन., पू.नि., पृ. 199
2. मित्रा, देबला, पू.नि. पृ. 128
3. बालक का प्रदर्शन हिन्दू मातृका का भी प्रभाव हो सकता है।
4. मित्रा, देबला, पू.नि. पृ. 130

(ख) जिन-संयुक्त मूर्तियां– देवगढ़ एवं खजुराहो की जिन अभिनन्दन की तीन मूर्तियों (10वीं-11वीं शती ई.) में यक्षी सामान्य लक्षणों वाली और द्विभुजा है तथा उसके करों में अभयमुद्रा एवं फल (या कलश) प्रदर्शित हैं।

(5) तुम्बरु यक्ष

शास्त्रीय परम्परा : तुम्बरु (या तुम्बर) जिन सुमतिनाथ का यक्ष है। दोनों परम्पराओं में तुम्बरु को चतुर्भुज और गरुड़ वाहन वाला कहा गया है।

श्वेताम्बर-परम्परा-निर्वाणकलिका में तुम्बरु के दाहिने हाथों में वरदमुद्रा एवं शक्ति और बायें में नाग एवं पाश के प्रदर्शन का निर्देश है।[2] दो ग्रन्थों में नाग के स्थान पर गदा का उल्लेख है।[1] अन्य ग्रन्थों में गदा और नाग-पाश दोनों के उल्लेख हैं।[3]

दिगम्बर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में नाग यज्ञोपवीत से सुशोभित चतुर्भुज यक्ष के दो करों में दो सर्प और शेष में वरदमुद्रा एवं फल का वर्णन है।[4] परवर्ती ग्रन्थों में भी इन्हीं विशेषताओं के उल्लेख हैं।[5]

दक्षिण भारतीय परम्परा– दिगम्बर ग्रन्थ में चतुर्भुज यक्ष का वाहन गरुड़ है। उसके दो हाथों में सर्प और शेष दो में अभय और

---

1. ....तुम्बरुयक्षं गरुड़वाहनं चतुर्भुजं वरदशक्तियुक्त-दक्षिणपाणिं नागपाशयुक्तवामहस्तं चेति। निर्वाणकलिका 18.5
2. दक्षिणौ वरदशक्तिधरौ बाहू समुद्वहन्।
   वामौ बाहू गदाधारपाशयुक्तौ च धारयन्।। त्रि.श.पु.च. 3.3.246-47
   द्रष्टव्य, पद्मानन्दमहाकाव्यः परिशिष्ट-सुमतिनाथ 18-19
3. ....वरशक्तियुक्तहस्तौ गदोरगपपाशगवामपाणिः। मन्त्राधिराजकल्प 3.30., द्रष्टव्य, आचारदिनकर 34, पृ. 174
4. सुमतेस्तुम्बरोयक्षः श्यामवर्णश्चतुर्भुजः।
   सर्पद्वयफलं धत्ते वरदं परिकीर्तितः।
   सर्पयज्ञोपवीतोसी खगाधिपतिवाहनः।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.23-24
5. द्रष्टव्य, प्रतिष्ठासारोद्धार 3.133; प्रतिष्ठातिलकम् 7.5, पृ. 332; अपराजितपृच्छा 221.46

कटक मुद्राएं प्रदर्शित है। अज्ञातनाम श्वेतांबर ग्रन्थ में चतुर्भुज यक्ष का वाहन सिंह है और उसके करों में खड्ग, फलंक, वज्र एवं फल प्रदर्शित हैं। यक्ष यक्षी लक्षण में नागयज्ञोपवीत से युक्त यक्ष के दो हाथों में सर्प, और अन्य दो फल एवं वरदमुद्रा है।[1] यक्ष-यक्षी-लक्षण एवं दिगंबर ग्रन्थ के विवरण उत्तर भारतीय दिगंबर परम्परा के समान है।

मूर्ति परम्परा : तुम्बरु यक्ष की एक भी स्वतन्त्र मूर्ति नहीं मिली है। केवल खजुराहों की दो सुमतिनाथ की मूर्तियों (10वीं-11वीं शती ई.) में ही यक्ष आमूर्तितं है।[2] इनमें द्विभुज यक्ष सामान्य लक्षणों वाला और अभयमुद्रा एवं फल से युक्त है।

(5) महाकाली (या पुरुषदत्ता) यक्षी

शास्त्रीय परम्परा : महाकाली (या पुरुष) जिन सुमतिनाथ की यक्षी है। श्वेतांबर परम्परा में यक्षी को महाकाली और दिगंबर परम्परा में पुरुषदत्ता (या नरदत्ता) नाम से सम्बोधित किया गया है।

श्वेतांबर परम्परा-निर्वाणकलिका के अनुसार चतुर्भुजा महाकाली का वाहन पद्म है और उसके दाहिने हाथों के आयुध वरदमुद्रा और पाश तथा बायें के मातुलिंग और अंकुश हैं।[3] परवर्ती ग्रन्थों में भी इन्हीं लक्षणों के उल्लेख हैं।[4] केवल देवतामूर्तिप्रकरण में पाश के स्थान पर नागपाश का उल्लेख है।[5]

---

1. रामचन्द्रन, टी.एन., पू.नि., पृ. 199
2. ये मूर्तियां पार्श्वनाथ मन्दिर के गर्भगृह की भित्ति एवं मन्दिर 30 में हैं। विमलवसही की देवकुलिका 27 की सुमतिनाथ की मूर्ति में चतुर्भुज यक्ष सर्वानुभूति है।
3. ....महाकाली देवीं सुवर्णवर्णा पद्मवाहनां चतुर्भुजां वरदपाशाधिष्ठितदक्षिणकरां मातुलिंगांकुशयुक्तवामभुजां चेति।। **निर्वाणकलिका 18.5**
4. द्रष्टव्य, त्रि.श.पु.च. 3.3.248-49; **मन्त्राधिराजकल्प 3.54**; **पद्मानन्दमहाकाव्यः** परिशिष्ट-सुमतिनाथ 19-20; आचारदिनकर 34, पृ. 176
5. वरदं नागपाशं चांकुशं स्याद् बीजपूरकम्। देवतामूर्तिप्रकरण 5.25

दिगंबर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में चतुर्भुजा पुष्पदत्ता का वाहन गज है और उसकी भुजाओं में वरदमुद्रा, चक्र, वज्र एवं फल का वर्णन है।[1] अन्य ग्रन्थों में भी इन्हीं लक्षणों के उल्लेख हैं।[2]

दक्षिण भारतीय परम्परा : दिगंबर ग्रन्थ में गजारुढ़ यक्षी की ऊपरी भुजाओं में चक्र एवं वज्र और निचली में अभय एवं कटक मुद्राएं उल्लिखित हैं। अज्ञातनाम श्वेताम्बर ग्रन्थ में द्विभुजा यक्षी का वाहंन श्वान् है तथा हाथों के आयुध अभयमुद्रा और अंकुश हैं। यक्ष-यक्षी-लक्षण में गजवाहना यक्षी चक्र, वज्र, फल एवं वरदमुद्रा से युक्त है।[3] चतुर्भुजा यक्षी के ये विवरण उत्तर भारत की दिगंबर परम्परा से प्रभावित हैं।

मूर्ति परम्परा : पुरुषदत्ता की केवल दो स्वतन्त्र मूर्तियां मध्य प्रदेश में ग्यारसपुर के मालादेवी मन्दिर तथा उड़ीसा में बारभुजी गुफा से मिली हैं। मालादेवी मन्दिर की मूर्ति (10वीं शती ई.) मण्डप की दक्षिणी जंघा पर है जिसमें पुरुषदत्ता पद्मासन पर ललितमुद्रा में विराजमान है और उसका गजवाहन आसन के नीचे उत्कीर्ण है। चतुर्भुजा यक्षी के करों में खड्ग, चक्र, खेटक और शंख प्रदर्शित हैं। गजवाहन एवं चक्र के आधार पर देवी की पहचान पुरुषदत्ता से की गई है। बारभुजी गुफा की मूर्ति में यक्षी दशभुजा है और उसका वाहन मकर है। यक्षी के अवशिष्ट दाहिने हाथों में वरदमुद्रा, चक्र, शूल और खड्ग तथा बायें हाथों में पाश, फलक, हल, गुद्गर और पद्म है।[4]

---

1. देवी पुरुषदत्ता च चतुर्हस्तागजेन्द्रगा।
   रथांगवज्रशस्त्रासौ फलहस्ता वरप्रदा।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.25
   राजेन्द्रगावज्रफलोद्यचक्रवरांगहस्ता.......। प्रतिष्ठासारोद्धार 3.160
2. प्रतिष्ठातिलकम् 7.5, पृ. 342; अपराजितपृच्छा 221.19
3. रामचन्द्रन, टी. एन., पू.नि., पृ. 200
4. मित्रा, देवला, पू.नि., पृ. 130

खजुराहो की दो सुमतिनाथ की मूर्तियों में द्विभुजा यक्षी सामान्य लक्षणों वाली है। यक्षी के करों में अभयमुद्रा (या पुष्प) और फल प्रदर्शित हैं। विमलवसही की सुमतिनाथ की मूर्ति में अम्बिका निरूपित है।

(6) कुसुम यक्ष

शास्त्रीय परम्परा : कुसुम (या पुष्प) जिन पद्मप्रभ का यक्ष है। दोनों परम्पराओं में चतुर्भुज यक्ष का वाहन मृग बताया गया है। यक्ष के कुसुम और पुष्प नाम निश्चित ही जिन पद्मप्रभ के नाम से प्रभावित हैं।

श्वेताम्बर परम्परा–निर्वाणकलिका में मृग पर आरुढ़ कुसुम यक्ष के दाहिने हाथों में फल और अभयमुद्रा एवं बायें हाथों में नकुल और अक्षमाला का उल्लेख है।[1] अन्य ग्रन्थों में भी इन्हीं लक्षणों के उल्लेख हैं।[2] केवल **मन्त्राधिराजकल्प** एवं **आचारदिनकर** में वाहन क्रमशः मयूर और अश्व बताया गया है।[3]

दिगंबर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में यक्ष पुष्प मृगवाहन वाला और द्विभुज है।[4] अपराजितपृच्छा में भी यक्ष द्विभुज तथा मृग पर संस्थित है और उसके करों में गदा और अक्षमाला का उल्लेख है।[5] प्रतिष्ठासारोद्धार में चतुर्भुज यक्ष के ध्यान में उसकी दाहिनी भुजाओं में शूल (कुन्त) और मुद्रा तथा बायी में खेटक और अभयमुद्रा का वर्णन है।[6] प्रतिष्ठातिलकम में दोनों वाम करों में खेटक के प्रदर्शन का विधान है।[7]

---

1. कुसुमंयक्षं नीलवर्णं कुरंगवाहनं चतुर्भुजं फलाभययुक्तदक्षिणपार्णि नकुलकाक्षसूत्रयुक्तवामपार्णि चेति। निर्वाणकलिका 18.6
2. त्रि.श.पु.च. 3.4.180-81 ; पद्मानन्दमहाकाव्यः परिशिष्ट-पद्मप्रभ 16-17
3. रम्भादभाभवपुरेषकुमारयानो यक्षः फलामयपुरोगभुजः पुनातु।
   वभ्रवक्षदामयुतवामकरस्तु..........।।मन्त्राधिराजकल्प 3.31
   नीलस्तुरंगगमनश्च चतुर्भुजाढ्यः स्फूर्जस्फलाभयसुदक्षिणपाणि युग्मः।
   वभ्राक्षसूत्रयुतवामकरद्वयश्च...........।। आचारदिनकर 34, पृ. 174
4. पद्मप्रभजिनेन्द्रस्य यक्षो हरिणवाहनः।
   द्विभुजः पुष्पनामास्त्रौ श्यामवर्णः प्रकीर्तितः।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.27
5. कुसुमाख्यौ गदाक्षौ च द्विभुजो मृगसंस्थितः। अपराजितपुच्छा 221.47
6. मृगारूहं कुन्तकरापसव्यकरं सखेटाभयसव्यहस्तम्। प्रतिष्ठासारोद्धार 3.134
7. खेटोभयोभ्दासितसव्यहस्तं कुन्तेष्टदानस्फुरितान्यपाणिम्। प्रतिष्ठातिलकम् 7.6, पृ. 333

दक्षिण भारतीय परम्परा : दिगंबर ग्रन्थ में वृषभारूढ़ यक्ष चतुर्भुज है। उसकी ऊपरी भुजाओं में शूल एवं खेटक और निचली में अभय-एवं कटक मुद्राएं हैं। श्वेताम्बर ग्रन्थों में मृगवाहन से युक्त चतुर्भुज यक्ष के करों में वरदमुद्रा, अभयमुद्रा, शूल एवं फलक का वर्णन है।[1] श्वेतांबर ग्रन्थों के विवरण उत्तर भारतीय दिगंबर परम्परा से प्रभावित हैं।

कुसुम यक्ष की एक भी मूर्ति नहीं मिली है।

(6) अच्युता (या मनोवेगा) यक्षी

शास्त्रीय परम्परा : अच्युता (या मनोवेगा) जिन पद्मप्रभ की यक्षी है। श्वेतांबर परम्परा में यक्षी को अच्युता (या श्यामा या मानसी) और दिगंबर परम्परा में मनोवेगा कहा गया है। दोनों परम्परा के ग्रन्थों में यक्षी को चतुर्भुजा बताया गया है।

श्वेतांबर परम्परा-निर्वाणकलिका में नरवाहना अच्युता के दक्षिण करों में वरदमुद्रा एवं वीणा तथा वाम में धनुष एवं अभयमुद्रा का वर्णन है।[2] अन्य ग्रन्थों में वीणा के स्थान पर पाश[3] या बाण[4] के उल्लेख हैं। **आचारदिनकर** में यक्षी के दाहिने हाथों में पाश एवं वरदमुद्रा और बायें में मातुलिंग एवं अंकुश का उल्लेख है।[5]

दिगंबर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में चतुर्भुजा अश्ववाहना मनोवेगा के केवल तीन करों के आयुधों–वरद मुद्रा, खेटक एवं खड्ग का

---

1. रामचन्द्रन, टी. एन., पू.नि., पृ. 200
2. अच्युतां देवीं श्यामवर्णां नरवाहनां चतुर्भुजां वरदवीणान्वितदक्षिणकरां कार्मुकाभययुतवामहस्तां।। निर्वाणकलिका 18.6
3. त्रि.श.पु.च. 3.4.182-83; पद्मानन्दमहाकाव्य–परिशिष्ट 6.17-18
4. मन्त्राधिराजकल्प 3.55; देवतामूर्तिप्रकरण 7.29
4. श्यामा चतुर्भुजधरा नरवाहनस्था पाशं तथा च वरदं कारयोर्दधाना। वामान्ययोस्तदनु सुन्दरबीजपूरं तीक्ष्णांकुशं च परयोः............. ।। आचारदिनकर 34, पृ. 176

उल्लेख है।[1] अन्य ग्रन्थों में चौथी भुजा में मातुरिंग वर्णित है।[2] **अपराजितपृच्छा** में अश्ववाहना मनोवेगा के करों में वज्र, चक्र, फल एवं वरदमुद्रा के प्रदर्शन का निर्देश हैं।[3]

श्वेतांबर परम्परा में यक्षी का नाम 14वीं महाविद्या अच्युता से ग्रहण किया गया। हाथों में बाण एवं धनुष का प्रदर्शन भी सम्भवतः महाविद्या अच्युता का ही प्रभाव है। यक्षी का नरवाहन सम्भवतः महाविद्या महाकाली से प्रभावित है। दिगंबर परम्परा में यक्षी का नाम मनोवेगा है, पर उसकी लाक्षणिक विशेषताएं (अश्ववाहन, खड्‌ग, खेटक) महाविद्या अच्युता से प्रभावित हैं।

दक्षिण भारतीय परम्परा : दिगंबर ग्रन्थ में अश्ववाहना यक्षी के ऊपरी हाथों में खड्‌ग एवं खेटक और नीचे के हाथों में अभय-एवं कटक-मुद्रा का उल्लेख है। अज्ञातनाम श्वेतांबर ग्रन्थ में मृगवाहना यक्षी के करों में खड्‌ग, खेटक, शर एवं चाप का वर्णन है। यक्ष-यक्षी-लक्षण में अश्ववाहना यक्षी वरदमुद्रा, खेटक, खड्‌ग एवं मातुलिंग से युक्त है।[4] दक्षिण भारत की दोनों परम्पराओं के ग्रन्थों में यक्षी के साथ अश्ववाहन एवं खड्‌ग और खेटक के प्रदर्शन उत्तर भारत के दिगंबर परम्परा से सम्बन्धित हो सकते हैं।

मूर्ति परम्परा : यक्षी की नवीं से बारहवीं शती ई. के मध्य की चार स्वतन्त्र मूर्तियां देवगढ़, खजुराहो, ग्यारसपुर एवं बारभुजा गुफा

---

1. तुरंगवाहना देवी मनोवेगा चतुर्भुजा।
   वरदा कांचना छाया सिद्धासिफलकायुधा ।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.28
6. मनोवेगा सफलकफलखड्‌गवराच्यते। प्रतिष्ठासारोद्धार 3.161; प्रतिष्ठातिलकम् 7.6, पृ. 342
3. चतुर्वणा स्वर्णवर्णाऽशनिचक्रफलं वरम्।
   अश्ववाहनसंस्था च मनोवेगा तु कामदा।। अपराजितपृच्छा 221.20
4. रामचन्द्रन, टी. एन., पू.नि., पृ. 200

से मिली हैं।[1] देवगढ़ के मन्दिर 12 (862 ई.) की भित्ति पर पद्मप्रभ के साथ **सुलोचना** नाम की अश्ववाहना यक्षी निरूपित है।[2] चतुर्भुजा यक्षी के तीन हाथों में धनुष, बाण एवं पद्म हैं तथा चौथा जानु पर स्थित है। यक्षी का निरूपण 14वीं महाविद्या अच्युता से प्रभावित है।[3] ग्यारसपुर के मालादेवी मन्दिर की दक्षिणी भित्ति पर एक अष्टभुज मूर्ति (10वीं शती ई.) है। इसमें ललितमुद्रा में विराजमान यक्षी के आसन के नीचे अश्ववाहन उत्कीर्ण हैं। यक्षी के अवशिष्ट हाथों में खड्ग, पद्म[4], कलश, घण्टा, फलक, आम्रलुम्बि एवं मातुर्लिंग प्रदर्शित हैं। खजुराहो के पुरातात्त्विक संग्रहालय में भी चतुर्भुजा मनोवेगा की एक मूर्ति है। ग्यारहवीं शती ई. की इस स्थानक मूर्ति में यक्षी का अश्ववाहन पीठिका पर उत्कीर्ण हैं। यक्षी के स्कन्धों के ऊपर चतुर्भुज सरस्वती की दो लघु मूर्तियां बनी हैं।[5] बारभुजी गुफा की मूर्ति में चतुर्भुजा यक्षी हंसवाहना है। यक्षी के हाथों में वरदमुद्रा, वज्र (?), शंख (?) और पताका प्रदर्शित हैं।[6] उपर्युक्त मूर्तियों के अध्ययन से स्पष्ट है कि बारभुजी गुफा की मूर्ति के अतिरिक्त अन्य में सामान्यतः अश्ववाहन एवं खड्ग और खेटक के प्रदर्शन में परम्परा का निर्वाह किया गया है।

(क्रमशः)

---

1. ये सभी दिगंबर स्थल हैं।
2. जि. इ. दे., पृ. 107
3. महाविद्या अच्युता का वाहन अश्व है और उसके हाथों में खड्ग, खेटक, शर एवं चाप प्रदर्शित हैं। ओसिया के महावीर मन्दिर पर समान लक्षणों वाली महाविद्या अच्युता की दो मूर्तियां उत्कीर्ण हैं।
4. पद्म का निचला भाग शृंखला के रूप में प्रदर्शित है।
5. सरस्वती के करों में अभयमुद्रा, पद्म, पुस्तक एवं जलपात्र हैं।
6. मित्रा, देबला, पू. नि., पृ. 130

सोने के कंगन

श्री केवल मुनि

मंत्री मतिवर्द्धन उसे अपने निवास स्थान पर ले गया और बहुत ही आदर-सत्कार करके बोला—कुमार! अंग देश के राजा बनकर तुम हमारे राजा का मनोरथ पूरा करो। हमारी कई वर्षों की चिन्ता मिटाओ।

आश्चर्यचकित होकर कमलसेन ने पूछा—मंत्रिवर! युवा प्रतापी गुणसेन के होते हुए भी तुम मुझे राजा क्यों बनाते हो?

निराश मंत्री ने आसमान की ओर देखा—मानों शून्य में कुछ खोज रहा हो। वह कुछ कहना चाहता था, मगर सोच रहा था किस प्रकार बात प्रारम्भ करे। कमलसेन ने ही पुनः कहा—क्या बात है मन्त्रिवर?

थूक निगलते हुए मतिवर्द्धन मंत्री बोला—कुमार! हमारा पूरा वृत्तान्त सुन लो तो तुम्हारा समाधान हो जायेगा।

कमलसेन ने मौन पूर्वक स्वीकृति सूचक सिर हिला दिया। मन्त्री ने वृत्तान्त सुनाया।

इस नगर में श्रीकेतु राजा राज्य करता था। उसकी पटरानी का नाम वैजयन्ती।

एक दिन राज सभा में चर्चा चल पड़ी कि अपने नगर में सबसे अधिक सुखी कौन है?

राज सभा में चाटुकार तो होते ही हैं। सभी ने एक स्वर से राजा को ही सुखी बताया, किन्तु उनमें एक निडर ब्राह्मण भी था। वह बोला--इस नगर में महाराज से भी अधिक सुखी कोई और है।

–कौन?

–विनयंधर सेठ।

–वह बनिया महाराज से भी अधिक सुखी?

ब्राह्मण निडरता से बोला–विनयंधर सेठ के घर लक्ष्मी की तो अपार कृपा है ही। वह स्वयं भी रूपवान है और पद्मिनी जैसी चार स्त्रियाँ सदैव उसका अनुरंजन करती हैं। तारा, श्रीमती, लक्ष्मीवती और देवी चारों एक से एक बढ़कर रूपवती हैं। उन जैसा रूप एवं सौभाग्य पाने के लिए नगर की स्त्रियाँ व्रत उपवास आदि किया करती हैं।

राजा लालायित हो उठा। बोला–क्या इतनी रूपवती हैं वे?

–रूपवती तो हैं ही, गुण और शील में भी अनुपम हैं। राजा का हृदय कामाभिभूत हो गया। सभा समाप्त हुई। लोग अपने-अपने निवास को चले। राजा भी राजमहल में पहुँचा। किन्तु उसका चित्त काम की अग्नि में जल रहा था। वह उन रूपसियों को वश में करने का उपाय सोचने लगा। विनयंधर नगर सेठ था। राजसभा में भी उसका सम्मान था। उसके हाथ के लिखे सन्देश, पत्र, हिसाब-किताब पर लिखा–

हे स्त्री! तुम्हारे बिना मुझे रात का एक पहर भी सौ पहर के समान लगता है। मैं तुम्हारे विरह में तड़पता रहता हूँ।

और नीचे बड़ी सफाई में विनयंधर के हस्ताक्षर बना दिये। ऐसे कि स्वयं सेठ भी देखे तो वह भी न पहचान सके कि ये जाली हैं।

दूसरे दिन राज सभा में आकर राजा ने कहा–आप लोग विनयंधर को बड़ा सच्चरित्र बताते थे किन्तु वह है दुश्चरित्र! देखिए यह पत्र मुझे आज राजमहल में मिला है।

यह कहकर राजा ने पत्र सभासदों के समक्ष रख दिया। सभी ने देखा, विनयंधर के हस्ताक्षर स्पष्ट थे। सभी सभासद दंग रह गये।

उनके हृदय में विश्वास ही न हो रहा था कि सेठ ऐसा हो सकता है। किन्तु सभी मौन-चुप!

विनयंधर को राजाज्ञा से बुलाया गया। न्याय अथवा न्याय का ढोंग भी हुआ। पत्र के आधार पर सेठ को दुश्चरित्र सिद्ध कर दिया गया। राजा ने निर्णय दिया–सेठ को जेल में डाल दिया जाय और इसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति जब्त कर ली जाय तथा पत्नियों को सम्मान पूर्वक राजमहल में सुरक्षित पहुँचा दिया जाय।

राजाज्ञा का पालन हुआ। सेठ जेलखाने में, सम्पत्ति राज्यकोष में और सेठानियाँ राजमहल में पहुँच गई। राजनीति की कुटिल भाषा में तीनों ही सुरक्षित थे।

सभा ने राजा के हृदय में चलते हुए काम विकार को समझा किन्तु समर्थ के सम्मुख कौन बोल सकता है। सभी मौन हो गये–सत्य बोलकर–राजा का विरोध करके कौन विपत्ति मोल ले?

श्रीकेतु ने दासियों द्वारा उन चारों सेठानियों को फुसलाने का प्रयास किया। दासियों ने भी अपने स्वामी की आज्ञा पालन में कोई कसर न उठा रखी। भाँति-भाँति के वाग्जाल फैलाये, मीठी-मीठी चिकनी-चुपड़ी बातें बनाई, धन-वैभव का लोभ दिखाया, राज्य सत्ता और अधिकार का खूब बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया किन्तु वे सेठानियाँ तो मानो पर-पुरुष का नाम सुनने में ही बहरी थी। तब दासियों ने भय दिखाया, राज्य-कोष दिखाकर उन्हें डराया, अनेक प्रकार के कष्टों और यातनाओं का अतिरंजित वर्णन किया। किन्तु वे सेठानियाँ सती थीं। जब दासियों की बातों को सुनते-सुनते उनके कान पक गये तो उन्होंने एक ही उत्तर दिया–

दासियों! पति-विरह से बड़ा कोई दुःख नहीं होता, अपमान से बड़ा कष्ट नहीं होता, मृत्यु से बड़ा कोई भय नहीं होता किन्तु शीलव्रत का भंग और कुशील सेवन, इन सबसे अधिक भयंकर पाप होता है।

अपने राजा से जाकर स्पष्ट कह दो कि हम सब कुछ सह सकती हैं किन्तु शील भंग की बात स्वप्न में भी नहीं सोच सकती।

दासियों की असफलता से राजा ने समझा कि ये दासियाँ हैं। सेठानियाँ इनसे प्रभावित न हो पाई होंगी। मैं स्वयं प्रयास करूँ। मनुष्य को काम स्वयं करना चाहिए तभी सफलता मिलती है। यदि सेवक ही सब काम कर दिया करें तो स्वामी को कुछ करने की आवश्यकता ही क्या है?

विषयान्ध राजा सेठनियों के पास जा पहुँचा। उसने उन पर दृष्टि डाली तो वे उसे कुरूप लगी। आश्चर्य! कामान्ध पुरुष को तो कुरूपा भी सुरूपा दिखाई देती है। किन्तु यहाँ तो विपरीत बात हो रही थी। राजा ने आँखें मूद ली। दुबारा देखा तो सामने राक्षसियाँ ही खड़ी थी बेड़ौल, भयावनी आकृति वाली। राजा ने दोनों हाथों से आँखें बन्द कर ली। पुनः देखा तो सामने साक्षात् भूतनियाँ ही दिखाई दी।

श्रीकेतु का मुख श्री-विहीन हो गया। उसका हृदय भय से कांपने लगा। उसके चित्त में बिजली सी कौंधी–यह सब इनके शील पालन का चमत्कार है। राजा कुछ कह भी न सका। उसकी कामान्धता पर भय हावी हो गया।

अचानक ही पटरानी वैजयन्ती वहाँ आ गई और पति को धिक्कारते हुए बोली–छिः छिः धिक्कार है तुम्हें! अनेक राजकन्याओं के होते हुए भी तुम पराई स्त्रियों पर कुदृष्टि डालते हो! राजा के लिए तो प्रजा पुत्र के समान होती है। अपनी पुत्रियों पर कामान्ध दृष्टि डालते हुए तुम्हें लज्जा आनी चाहिए। तुम्हारी इस प्रवृत्ति को प्रकृति भी नहीं सह सकती? राजन्! जरा सोचो, पापाचार से अपने कुल और वंश की कीर्ति को कलंकित मत करो।

राजा के हृदय की पाप-वासना तो सेठानियों के शीलचमत्कार से पहले ही गायब हो तिरोहित हो चुकी थी। भय ने कामाग्नि को बुझा

दिया था। इस पर रानी ने जो फटकार सुनाई तो राजा के अविवेक का पर्दा उठ गया। उसने सेठानियों से क्षमायाचना की। उन्हें सम्मानपूर्वक वापिस भिजवा दिया, जब्त की हुई सम्पत्ति भी लौटा दी और सेठ विनयंधर को क्षमा मांगकर कारागार से मुक्त कर दिया।

चम्पानरेश पर इस घटना का इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने प्रजा पालन ही अपना कर्तव्य समझ लिया। हृदय से कामान्धता का ज्वर उतर गया। प्रजा उनकी दृष्टि में पुत्रवत् हो गई थी। वे अब प्रजा के पालक बन गये, स्वामी नहीं। शील की महिमा उनके हृदय की गहराइयों में गहरी पैठ चुकी थी।

कुछ समय पश्चात् नगरी के बाहर शूरसेन मुनिराज पधारे। राजा श्रीकेतु उनकी देशना सुनने गया। मुनिराज की देशना समाप्त होने के पश्चात् राजा ने अपनी जिज्ञासा प्रकट की–गुरुदेव! मेरे जीवन में एक विस्मयकारी घटना हुई है, कृपया उसका समाधान करें।

हमारे नगर के विनयंधर सेठ ने ऐसा पूर्वभव में कौन सा दिव्य कार्य किया था जिसके सुफल रूप इसे इतनी शीलवती पत्नियाँ मिली और इन स्त्रियों का ऐसा कौन सा शुभ कर्म था जिसके फलस्वरूप मुझे इनके रूप बदलने का चमत्कार दिखाई दिया।

मुनिराज बोले–राजन्! इस छोटे से उत्तर से मेरी तृप्ति नहीं हुई। कृपया, विस्तार से बताइये।

गुरुदेव समझ गये कि राजा को पूर्वभव की कथा सुनाने से लाभ ही होगा। इसकी प्रवृत्ति धर्म की ओर बढ़ेगी। जैन साधु व्यर्थ के अनर्गल किस्से कहानी नहीं कहते। यदि कोई उपाख्यान सुनाते भी है तो धर्म-प्रभावना की दृष्टि से ही। श्रोता को लाभ न हो, उसकी धर्म की ओर रुचि न बढ़े, अथवा धर्म-मार्ग से चंचल हुआ चित्त दुबारा न जमे, ऐसी कथाएँ और घटनाएं कहने में अनगार साधु कभी प्रवृत्त नहीं होते। साथ ही सत्य महाव्रती साधु केवल सत्य ही बोलते हैं, सत्य घटनाएँ ही कहते हैं। और उतनी ही कहते हैं जितनी धर्म प्रभावना के लिए आवश्यक है।

मुनिश्री बोले–राजन्! तुम विनयंधर और उसकी पत्नियों के पूर्वभव सुनो। सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा।

मुनिश्री ने विनयंधर और उसकी पत्नियों के पूर्वभवों का वर्णन करना प्रारम्भ किया।

राजपुर नगर में विचार धवल नाम का राजा राज्य करता था। उसका एक दास था। दास कर्म से ही दास था किन्तु उसकी चित्तवृत्ति उज्ज्वल थी। वह सद्गुणी था। उसने नियम ले लिया था किसी सुपात्र को दान देकर ही भोजन करूँगा।

उसका यह नियम वर्षों से चला आ रहा था। यदि किसी दिन सुपात्र को दान देकर ही भोजन करूँगा।

उसका यह नियम वर्षों से चला आ रहा था। यदि किसी दिन सुपात्र नहीं मिलता तो वह भूखा ही रह जाता, भोजन नहीं करता था।

एक दिन उसका भाग्योदय हो ही गया। स्वयं तीर्थंकर भगवान सुविधिनाथ ने छद्मस्थ-अवस्था में अपने चरणों से उसके घर को पवित्र किया। स्वयं भगवान चलकर भक्त के घर आये थे। धन्य हो गया भक्त! दास ने भक्तिपूर्वक उन्हें आहारादि अर्पण किया। भगवान के दान ग्रहण करते ही आकाश से अहोदानं अहोदानं की देव ध्वनि हुई। देव चमत्कार देख़कर दास और नम्र हो गया, झुक गया। उसके हृदय में अपने भाग्य पर गर्व की भावना उत्पन्न नहीं हुई वरन् भगवान के चरणों की महत्ता का ही गुणगान करने लगा।

प्रभु तो निस्पृह थे। वे तो चले गये, किन्तु दास ने भगवान के चरण कमल अपने हृदय में अंकित कर लिए। उसके अन्तरमन में एक ही मूर्ति थी–भगवान सुविधिनाथ की।

शुभ परिणामों से वह दास मरकर देव हुआ और वहाँ से आयुष्य पूरा करके विनयंधर सेठ के रूप में अवतरित हुआ है।

दान की महिमा के कारण ही विनयंधर को ऐसी सुख सामग्री प्राप्त हुई है—मुनिराज ने बताया।

राजा श्रीकेतु को दान की अपूर्व महिमा और भगवान सुविधिनाथ के पारणे की बात सुनकर शरीर में रोमांच हो आया। गद्गद् स्वर बोला-

धन्य है विनयंधर सेठ!

पुनः प्रकृतिस्थ होकर गुरुदेव से विनती की—प्रभु! उन सती स्त्रियों के शुभ कर्म भी बताइये।

राजा की इच्छा और प्रार्थना सुनकर मुनिराज शूरसेन सेठानियों के पूर्वभव बताने लगे।

अयोध्या के राजा नरकेसरी और रानी कमलसुन्दरी की रतिसुन्दरी नाम की एक पुत्री थी। रतिसुन्दरी की तीन सखियाँ थी—दत्त मन्त्री की पुत्री बुद्धिसुन्दरी, सुमति सेठ की कन्या ऋद्धिसुन्दरी और पुरोहित की पुत्री गुणसुन्दरी। चारों सखियाँ साथ-साथ खेलते हुए किशोरी हो गई। वे साथ-साथ क्रीड़ा करती और उनका समय साथ ही साथ व्यतीत होता।

एक बार वे चारों सुमति सेठ के घर में क्रीड़ा मग्न थीं कि देवयोग से एक गुणश्री नाम की आर्या पधारी। इन चारों ने भक्तिपूर्वक साध्वीजी का वन्दन किया। साध्वी जी ने इनको सम्यक्त्व सहित श्रावक के बारह व्रतों का स्वरूप समझाया और शील व्रत का महात्म्य बतलाया। चारों ने शील-व्रत अणुव्रत पालन का नियम ले लिया।

समय जाते देर नहीं लगती। चारों सखियों ने युवावस्था में प्रवेश किया।

रतिसुन्दरी का पाणिग्रहण नन्दीपुर के राजा चन्द्र के साथ सम्पन्न हो गया। चन्द्र राजा रति जैसी सुन्दर और सरस्वती के समान गुणवती पत्नी को पाकर बहुत प्रसन्न था। दोनों आनन्द मग्न रहने लगे।

रूप और गुण छिपते नहीं। रतिसुन्दरी के रूप गुण की चर्चा भी चारों ओर फैल गई। कुरु देश के राजा महेन्द्रसिंह के कानों में भी यह बात आई। उस रूप लोभी ने अपना दूत चन्द्र राजा के पास भेजा।

दूत ने आकर चन्द्र राजा से रतिसुन्दरी की माँग की।

चन्द्र यद्यपि महेन्द्रसिंह का अधीन राजा था किन्तु रति सुन्दरी की माँग पर उसे क्रोध चढ़ आया। उसने आँखें लाल करके कहा–दूत! अपने राजा से कह देना कि कुमारी कन्या माँगी जाती है, विवाहिता वधू नहीं। तुम्हारा स्वामी किसी व्यभिचारिणी स्त्री का पुत्र मालूम होता है। ऐसी माँग तो व्यभिचारिणी स्त्री का व्यभिचारी पुत्र ही कर सकता है।

राजा चन्द्र का उत्तर आवश्यकता से अधिक कठोर था। दूर सुनकर अवाक् रह गया। दूर को खड़ा देखकर चन्द्र का क्रोध सीमा को पार कर गया। उसने अपने सेवकों द्वारा उसे धक्के देकर निकलवा दिया।

अपमानित दूत ने अपने अपमान और चन्द्र राजा के क्रोध पूर्ण शब्द राजा महेन्द्रसिंह को कह सुनाए। तुरन्त ही महेन्द्रसिंह ने सैन्य सजाकर नन्दीपुर पर आक्रमण कर दिया। दोनों में घोर युद्ध हुआ। चन्द्र राजा की सेना अल्प थी, साधन सीमित थे। वह हार गया, उसकी सेना छिन्न-भिन्न हो गई।

विजयी राजा महेन्द्रसिंह ने नन्दीपुर को लूटा और रति सुन्दरी को बन्दी बनाकर ले गया।

रतिसुन्दरी राजमहल में पहुँचा दी गई।

महेन्द्रसिंह रात्रि के प्रथम प्रहर में रतिसुन्दरी के भवन में आया। राजा की इन्छा से रतिसुन्दरी अनजान नहीं थी। इससे पहले कि राजा कुछ कहे रतिसुन्दरी बड़ी विनम्रता पूर्वक बोली–

–महाराज! अभी मैंने चार मास का शीलव्रत लिया हुआ है। आप तब तक मेरे इस व्रत को खंडित मत करिए। आपकी बड़ी कृपा होगी।

मधुर वचन और वह भी सुन्दरी के मुख से, उसका प्रभाव अचूक होता है। राजा की विषयान्धता ठंडी पड़ गई। वह तो सोचकर आा था कि बल प्रयोग करना पड़ेगा। धमकी की आवश्यकता होगी, मान-मनुहार करनी पड़ेगी तब कहीं जाकर रतिसुन्दरी रति की अनुमति देगी। किन्तु यहाँ तो बात ही कुछ और निकली। वह तो स्वयं ही तैयार है, न बल-प्रयोग की आवश्यकता पड़ी न खुशामत की।

राजा को मौन देखकर रतिसुन्दरी ने ही पुनः कहा–

महाराज! आप दयालु हैं। सबको अभय प्रदान करते हैं। मैं तो आपकी शरण में हूँ क्या मुझे अभय नहीं देंगे? आपकी छत्र छाया में भी क्या मेरा व्रत खंडित हो जाएगा?

महेन्द्रसिंह मधुर वचनों के वाणों से पूर्णतया बिध चुका था, बोला–नहीं देवी! नहीं! मेरा-छाया में तुम निर्भय रहो। चार मास का समय बहुत लम्बा नहीं होता। उसके बात ही तुम्हें अपनी अंकशायिनी बना लूँगा। तब तक तुम निर्विघ्न अपना व्रत पालो।

रतिसुन्दरी ने स्नान, विलेपन आदि का त्याग कर दिया। वह आयंबिल तप करने लगी। उपवास आदि के कारण उसकी काया क्षीण होने लगी। चार महीने बीतते-बीतते उसकी शरीर पिंजर मात्र हो गया। स्नान न करने से शरीर से दुर्गन्ध की लहर उठने लगी। सुन्दरता विलीन हो गई। ओज उड़ गया और हड्डियां दिखाई देने लग गई।

ठीक चार माह बीतने पर राजा महेन्द्रसिंह आया तो रतिसुन्दरी का यह रूप देखकर दंग रह गया। एक बार तो उसे पहचानने में भी कठिनाई हो गई। आश्चर्य चकित होकर वह बोला–

–देवि! यह क्या? तुम्हारे शरीर की ऐसी दुर्दशा? न मांस रहा

न सुगन्धि! पिंजर मात्र दुर्गन्धि का पिटारा बन गया। राजमहल में किसी ने तुम्हारी परिचर्या नहीं की?

–राजन्! व्रत पालन से ही शरीर की यह दशा हुई है। इसमें परिचारिकाओं का दोष नहीं; अनशन से शरीर ऐसा ही हो जाता है।

–रानी! तुमने ऐसा कठिन व्रत क्यों लिया? तुम्हारे वैराग्य का कारण?

–राजन्! यह शरी ही वैराग्य का कारण है। ऊपर से चमड़ी ही सुन्दर दिखाई पड़ती है, अन्दर को मल मूत्र, रक्त पीव आदि की थैली ही है। इस शरी से बड़ा वैराग्य का कारण और दूसरा कोई नहीं।

–सुन्दरी! कुछ भी सही। शरीर का स्वभाव और रचना कैसी भी है। मैं तो चार माह तक तुम्हारा नाम ही चपता रहा। तुम्हारी सुन्दरता मेरे मन मस्तिष्क पर छाई रही।

–कुरुनरेश! आपको मेरा कौन सा अंग सर्वाधिक प्रिय लगा?

–सुमुखि! तुम्हारे सुन्दर नेत्रों ने मुझे दीवाना बना दिया था।

–लीजिए भूपाल! आपकी मनोवांझित वस्तु प्रस्तुत है।

यह कहकर एक छोटी सी कटारी से रतिसुन्दरी ने अपनी आंखें निकाल कर राजा के सम्मुख रख दी।

सुन्दर नेत्र राजा के समक्ष रखे थे और रतिसुन्दरी के मुख पर नेत्रों के स्थान पर दो भयावने, गहरे और अन्धकार पूर्ण गड्ढे दिखाई देने लगे। उन कोटरों से बहता हुआ रक्त उसके मुख की भयानकता को और भी बढ़ा रहा था।

(क्रमशः)

JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone: 2268 2655

English :

1. Bhagavati-sutra-Text edited with English translation by K. C. Lalwani in 4 volumes:
   - Vol - 1 (satakas 1-2) Price : Rs. 150.00
   - Vol - 2 (satakas 3-6) 150.00
   - Vol - 3 (satakas 7-8) 150.00
   - Vol - 4 (satakas 9-11) ISBN : 978-81-922334-0-6 150.00
2. James Burges - The Temples of Satrunjaya. Jain Bhawan. Kolkata ; 1977. pp. x+82 with 45 plates Price : Rs. 100.00
   (It is the glorification of the sacred mountain Satrunjaya.)
3. P. C. Samsukha - Essence of Jainism Price : Rs. 15.00
   ISBN : 978-81-922334-4-4
4. Ganesh Lalwani - Thus Sayeth Our Lord, Price : Rs. 50.00
   ISBN : 978-81-922334-7-5
5. Verses from Cidananda
   Translated by Ganesh Lalwani Price : Rs. 15.00
6. Ganesh Lalwani - Jainthology Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-2-0
7. Lalwani and S. R. Banerjee-
   Weber's Sacred Literature of the Jains Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-3-7
8. Prof. S. R. Banerjee
   Jainism in Different States of India Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-5-1
9. Prof. S. R. Banerjee
   Introducing Jainism ISBN : 978-81-922334-6-8 Price : Rs. 30.00
10. Smt. Lata Bothra- The Harmony Within Price : Rs. 100.00
11. Smt. Lata Bothra- From Vardhamana- to Mahavira Price : Rs. 100.00
12. Smt. Lata Bothra- An Image of- Antiquity Price : Rs. 100.00

Hindi :

1. Ganesh Lalwani - Atimukta (2nd edn) ISBN : 978-81-922334-1-3
   Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - Sraman Samskriti Ki Kavita, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 20.00
3. Ganesh Lalwani - Nilanjana, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 30.00
4. Ganesh Lalwani - Chandan-Murti
   Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 50.00
5. Ganesh Lalwani-Vardhaman Mahavira Price : Rs. 60.00

6.	Ganesh Lalwani-Barsat ki Ek Raat,	Price : Rs.	45.00
7.	Ganesh Lalwani -- Panchdasi.	Price : Rs.	100.00
8.	Rajkumari Begani-Yado ke Aine me.	Price : Rs.	30.00
9.	Dr. Lata Bothra - Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra	Price : Rs.	15.00
10.	Dr. Lata Bothra - Sanskriti Ka Adi Shrote, Jain Dharm	Price : Rs.	24.00
11.	Prof. S.R. Banerjee - Prakrit Vyakarana Praveshika	Price : Rs.	20.00
12.	Dr. Lata Bothra - Adinath Risabdev Aur Asthapad ISBN : 978-81-922334-8-2	Price : Rs.	250.00
13.	Dr. Lata Bothra - Astapad Yatra	Price : Rs.	50.00
14.	Dr. Lata Bothra - Aatm Darsan	Price : Rs.	50.00
15.	Dr. Lata Bothra - Varanbhumi Bengal ISBN: 978-81-922334-9-9	Price : Rs.	200.00
16.	Dr. Lata Bothra - Tatva Bodh	Price : Rs.	50.00

Bengali :

1.	Ganesh Lalwani-Atimukta,	Price : Rs.	40.00
2.	Ganesh Lalwani-Sraman Sanskritir ki Kavita	Price : Rs.	20.00
3.	Puran Chand Shymsukha-Bhagavan Mahavir O Jaina Dharma.	Price : Rs.	15.00
4.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Prasnottare Jaina-Dharma	Price : Rs.	20.00
5.	Dr. Jagatram Bhattacharya Das Baikalik Sutra	Price : Rs.	25.00
6.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Mahavir Kathamrita	Price : Rs.	20.00
7.	Sri Yudhishthir Majhi Sarak Sanskriti O Puruliar Purakirti	Price : Rs.	20.00
8.	Dr. Abhijit Bhattacharyya-Aatmajayi	Price : Rs.	30.00

Some Other Publications :

1.	Dr. Lata Bothra - Vardhamana Kaise Bane Mahavir	Price : Rs.	15.00
2.	Dr. Lata Bothra - Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan	Price : Rs.	10.00
3.	Dr. Lata Bothra - Bharat Me Jain Dharma	Price : Rs.	100.00
4.	Acharya Nanesh - Samata Darshan Aur Vyavhar (Bengali)	Price : Rs.	
5.	Shri Suyesh Muniji - Jain Dharma Aur Shasnavali (Bengali)	Price : Rs.	50.00
6.	K.C.Lalwani - Sraman Bhagwan Mahavira	Price : Rs.	25.00

इसके अलावा जैन धर्म से सम्बन्धित अन्य तीन पत्रिकाएँ :

		Rs. P.
जैन जर्नल त्रैमासिक पत्रिका (अंग्रेजी)	वार्षिक	500.00
ISSN 0021 - 4043	(आजीवन)	5000.00
तित्थयर मासिक पत्रिका (हिन्दी)	वार्षिक	500.00
ISSN 2277 - 7865	(आजीवन)	5000.00
श्रमण मासिक पत्रिका (बंगला)	वार्षिक	200.00
ISSN : 0975 - 8550	(आजीवन)	2000.00

Creators of Prestigious Interiors
Established 1970

Creativity is a Modern Religion

Nahar

Architects, Interiors, Consultants

5B, Indian Mirror Street, Kolkata-700 013
Phone : 2227-5240/45, Fax : 22276356
Email Id : info@nahardecor.com

Vol XXXVIII No.02
25th May 2014
TITTHAYARA
Postal Reg. No. KOL.RMS / 70/2013-15
R.N.I. 30181/77